THE ECONOMIC TIMES

Date: 11-09-17

Weather, we like it or not

Debkumar Mitra

Atlantic Hurricane season is on. One after another Category 5 and 4 storms are pummeling the Caribbean and US. It was Hurricane Harvey that flooded Houston, Texas. Then, a Category 5 hurricane — the strongest in the Saffir-Simpson hurricane wind scale, with sustained winds over 251 kmph — Irma, left a trail of destruction in its wake in the Caribbean and Florida. The Category 4 Jose ravaged the region close on the heels of Irma.Assessing human impact on global weather is a complex issue. There are several — some conflicting — theories. Many weather models actually evoke more questions than they are supposed to answer. This gap in scientific understanding allows countries to opt out of international climate treaties, invest more in fossil fuel, and continue to remove rainforests.Besides customary celebrations on World Environment Day, Earth Day and Earth Hour, there is no effort on the part of governments to educate people to be responsible in using our resource-limited planet. Sharing a photograph on social media showing a headmaster of a submerged school in Assam raising the tricolour on August 15 isn't going to help. We need to put more money into weather research and talk about the 41 million people affected by the floods in India, Bangladesh and Nepal this year.

If the science of global warming is a jigsaw puzzle with a lot of missing pieces, then we have to cut down on government spending and invest in research to quickly find out the missing ones. Only then will we get a more complete picture.Instead of the 'radical activist' mode of thinking that has plagued global warming/weather science research, there has to be an objective assessment of the factors responsible for pushing Earth on the brink. There are hundreds of years of data on the Arctic ice shrinkage, detailed records of how severe cyclones are overrunning small Pacific island nations and careful monitoring of river water quality across the world.Also, several years' worth of environmental pollution data is available to help us comprehend the hole we have dug ourselves into. There is no escaping the fact that we have already entered the anthropocene epoch — the geological period during which human activity has been the dominant influence on climate and the environment — and it has become imperative to take rational decisions vis-à-vis the environment.The internal feuds between scientists on issues — definitions of global warming, the impact of human action on sea temperature rise, the kind of models that will actually be more effective in predicting dangerous weather, etc — can carry on. However, the moot point is to quickly come to a consensus to convince politicians and administrators to see reason.

This won't be easy. There is a huge population that believes there is a 'divine hand' in all forms of human suffering. This lot stands behind many counter-intuitive environmental measures taken by administrations. For instance, there is incontrovertible proof that global warming that caused the seawater temperature to rise to such levels in the Atlantic has a role in the regular formation of higher

category hurricanes in the past 20 years. Simply refusing to believe the data will not stop these storms.Some people question the very idea of the transition of global warming as a natural environmental phenomenon that occurred before the advent of humans to a human-mediated phenomenon. Why is global warming taking place at this alarming pace? What natural cause is behind this rate of temperature rise? Why has this rate moved northward after the Industrial Revolution? The debate can go on till the last Tuvalu citizen leaves her submerged country to find home as a refugee. Instead, the focus should be on a better understanding of global warming.Nature does not participate in scientific debates or negotiate with administrations. It merely floods Assam and Texas, and keeps slicing off big chunks of ice in Antarctica.

दैनिक भास्कर

Date: 11-09-17

धर्मांधता को ध्वस्त करता कालजयी ओजस्वी स्वर

विवेकानंद ने कहा, "हे अमेरिकावासी बहनो और भाइयो, आपने जिस सौहार्द और स्नेहपूर्णता के साथ हम लोगों का स्वागत किया है उससे मेरा हृदय अपार हर्ष से भर गया है।

- दुनिया की सबसे प्राचीन संत परम्परा की तरफ से मैं आपको धन्यवाद देता हूं। मैं आपको सभी धर्मों की जननी की तरफ से धन्यवाद देता हूं और सभी सम्प्रदायों व मतों के कोटि कोटि हिन्दुओं की तरफ से आपका आभार व्यक्त करता हूं।"

- "मेरा धन्यवाद उन वक्ताओं को भी जिन्होंने इस मंच से यह कहा कि दुनिया में सहनशीलता का विचार सुदूर पूरब के देशों से फैला है। मुझे गर्व है कि मैं एक ऐसे धर्म से हूं, जिसने संसार को सहनशीलता और सार्वभौमिक स्वीकृति का पाठ पढ़ाया है।"

- "हम लोग सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते वरन् समस्त धर्मों को सच्चा मानकर स्वीकार करते हैं।"

गर्व है कि मैं एक ऐसे धर्म से हूं...

- विवेकानंद ने कहा, "मुझे गर्व है कि मैं एक ऐसे देश से हूं, जिसने इस धरती के सभी देशों और धर्मों के परेशान और सताए गए लोगों को शरण दी है। मुझे यह बताते हुए गर्व हो रहा है कि हमने अपने हृदय में उन

इजरायलियों की पवित्र यादें संजोकर रखी हैं, जिन्होंने दक्षिण भारत में उसी वर्ष शरण ली थी, जिस वर्ष उनका पवित्र मंदिर रोमनों ने धूल में मिला दिया था।"

- "मुझे इस बात का गर्व है कि मैं एक ऐसे धर्म से हूं, जिसने महान पारसी धर्म के लोगों को शरण दी और जिसका पालन वह अब तक कर रहा है।"

- "भाइयो, मैं आपको एक स्तोत्र की कुछ पंक्तियां सुनाता हूं, जिसे मैंने बचपन से दोहराया है और जिसे रोज करोड़ों लोग प्रतिदिन दोहराते हैं: 'जिस तरह अलग-अलग स्त्रोतों से निकली विभिन्न नदियां अंत में समुद में जाकर मिलती हैं, उसी प्रकार हे प्रभो!"

- "भिन्न-भिन्न रुचि के अनुसार विभिन्न टेढ़े-मेढ़े अथवा सीधे रास्ते से जाने वाले लोग अंत में तुझमें ही आकर मिल जाते हैं।' यह सम्मेलन जो आज तक आयोजित की गई सबसे पवित्र सभाओं में से है, गीता में बताए गए इस सिद्धांत का प्रमाण है।"

जो मेरी ओर आता है, उसे मैं प्राप्त होता हूं

-उन्होंने कहा, "जो कोई मेरी ओर आता है, चाहे वह कैसा भी हो, मैं उसे प्राप्त होता हूं। लोग चाहे कोई भी रास्ता चुनें, आखिर में मुझ तक ही पहुंचते हैं।"

- "सांप्रदायिकता, हठधर्मिता और उसकी वीभत्स वंशधर धर्मांधता इस सुंदर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुकी है। वे पृथ्वी को हिंसा से भरती रही हैं। उसे बार-बार मानवता के रक्त से नहलाती रही हैं, सभ्यताओं का विध्वंस करती और पूरे पूरे देशों को निराशा के गर्त में डालती रही हैं।"

- "अगर ये भयानक राक्षस नहीं होते तो आज मानव समाज कहीं ज्यादा उन्नत होता, लेकिन अब उनका समय पूरा हो चुका है। मुझे पूरी उम्मीद है कि आज इस सम्मेलन का शंखनाद सभी धर्मांधताओं का, तलवार या लेखनी के द्वारा होने वाले सभी उत्पीड़नों का, तथा एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर होने वाले मानवों की पारस्परिक कटुताओं का मृत्यु-निनाद सिद्ध हो।"

विश्व मेले का हिस्सा था धर्म सम्मेलन

- 1893 का विश्व धर्म सम्मेलन कोलंबस द्वारा अमेरिका की खोज करने के 400 वर्ष पूरे होने पर आयोजित विशाल विश्व मेले का एक हिस्सा था। अमेरिकी नगरों में इस आयोजन को लेकर इतनी होड़ थी कि अमेरिकी सीनेट में न्यूयॉर्क, वॉशिंगटन, सेंट लुई तथा शिकागो के बीच मतदान कराना पड़ा था, जिसमें शिकागो को बहुमत मिला।

- मिशिगन झील के किनारे 1037 एकड़ भूमि पर इस प्रदर्शनी में 2.75 करोड़ लोग आए। प्रतिदिन उपस्थिति डेढ़ लाख से अधिक। सब देखने के लिए 150 मील चलना पड़ता था।

- स्वामी विवेकानंद 31 मई, 1893 के दिन मुंबई से यात्रा प्रारंभ करके याकोहामा से एम्प्रेस आॅफ इंडिया नामक जहाज से वेंकुअर पहुंचकर ट्रेन से शिकागो पहुंचे थे। जहाज में उनके सहयात्री जमशेदजी टाटा थे, जो उस समय युवक थे एवं बाद में बड़े उद्योगपति बने।

राष्ट्रीय सहारा

Date :10-09-17

जो जहां है, वहीं से लड़ना होगा

राजकिशोर

कुछ लोग मर कर ही प्रसिद्ध होते हैं। कहने का मतलब यह नहीं है कि कन्नड़ साप्ताहिक ''लंकेश पत्रिके' की संपादक गौरी लंकेश, अपनी हत्या के पूर्व, कुछ कम प्रसिद्ध थीं। वे उच्च दर्जे की पत्रकार थीं। उनकी हत्या ही इसलिए हुई कि उनकी आवाज में दम था। कोई साधारण पत्रकार होतीं और सरकारी विज्ञापनों के बल पर अपनी पत्रिका चला रही होतीं तो उन्हें कौन पूछता! ऐसे पत्रकारों की संख्या पूरे भारत को देखें, तो कई लाख हो सकती है, जो सरकारी विज्ञापन के घूरे पर पल रहे हैं। लेकिन गौरी के जीवन का उद्देश्य किसी तरह बने रहना नहीं था। जिस प्रकार की पत्रकारिता वह कर रही थीं, उसे सोद्देश्यपरक पत्रकारिता कहा जाता है। ऐसे पत्रकार ही देश-समाज को आगे ले जाते हैं। मरने के बाद आज गौरी का संदेश देश भर में फैल गया है। कुछ-कुछ इसी अंदाज में कि गोडसे ने गांधी की हत्या कर उन्हें अमर कर दिया। तय है कि जिसने भी उनकी हत्या की होगी, उनके विचारों की वजह से ही की होगी। उनके विचारों के केंद्र में कई महत्त्वपूर्ण बातें थीं : सांप्रदायिकता का विरोध, परंपरा के नाम पर निर्बुद्धिपरकता का विरोध, लोकतंत्र के सिमटते जाने का विरोध, मानव अधिकारों का समर्थन, स्त्री मुक्ति का समर्थन, दबे-कुचले लोगों का समर्थन, युद्ध का विरोध, सभी प्रकार के शोषण और अन्याय का विरोध। इस समय देश में राजनीति की एक प्रबल धारा है, जो इन मानवीय उद्देश्यों के खिलाफ है। स्वाभाविक रूप से गौरी का राजनीति की इस धारा संघर्ष है। यही कारण है कि उनकी हत्या का पहला शक संघ परिवार पर गया। हो सकता है, हत्या का कारण कुछ और रहा हो पर पुरानी कहावत है कि बद अच्छा बदनाम बुरा।

चूंकि संघ के लोग पहले भी प्रगतिशील विचार के लेखकों और शिक्षकों की हत्या करते रहे हैं,और गौरी संघ की विचारधारा के खिलाफ धुआंधार लिखती थीं, इसलिए सबसे पहले इन्हीं लोगों की ओर ध्यान गया। इससे इस हत्या ने एक प्रतीकात्मक अर्थ ले लिया है। यह नहीं कहा जा सकता कि जितने लोगों ने वास्तव में स्वतंत्रता संघर्ष में हिस्सा लिया था, सिर्फ वे ही अंग्रेजों की गुलामी से स्वाधीनता चाहते थे। उन्हें ऐसे कई गुना अधिक लोगों का समर्थन था, जो आजादी के पक्ष में तो थे, पर उसे हासिल करने की जद्दोजहद में सड़क पर उतरना नहीं चाहते थे। ये मूक समर्थक ब्रिटिश सरकार की मशीनरी में भी थे, चपरासी से ले कर उच्चतम पद तक। बाद में भेद खुला कि नौसेना में भी ऐसे बागी थे, जो भारत को स्वतंत्र देखना चाहते थे। पुलिस विभाग में भी रहे होंगे। भगत सिंह एक थे, पर पता नहीं कितने युवकों के हृदय में भगत सिंह होने की तमन्ना अंगड़ाई ले रही थी। जरा सोचिए, इनमें से आधे भी डर, संकोच या अनिर्णय छोड़ कर स्वाधीनता संघर्ष में कूद गए होते, तो आजादी हमें दस या बीस साल पहले मिल सकती थी। आजादी समय की दुर्निवार मांग थी। एक सीमा तक ही उसे कुचला जा सकता था। भारत बहुत दिनों तक गुलाम नहीं रह सकता था। सवाल यह था कि दस वर्ष पहले या दस वर्ष बाद? वैसा ही वातावरण आज है।

हमारी स्वतंत्रता खतरे में है। सत्य बोलने वाला कहीं भी, कभी भी मारा जा सकता है। बड़े पैमाने पर झूठ की खेती जा रही है। सारे आंकड़े बता रहे हैं कि अर्थव्यवस्था रसातल में जा रही है। समाज में सांप्रदायिक विभाजन लगभग पूर्ण हो

चुका है। बीफ, लव जिहाद, वंदे मातरम् जैसे अनावश्यक और भ्रामक मुद्दे खड़े किए जा रहे हैं। गणोश के हाथी के सिर को वैदिक काल की सर्जरी का नमूना बताया जा रहा है। मृत भाषा संस्कृत को फिर से प्रतिष्ठित करने की कोशिश की जा रही है। धर्म के नाम पर आडम्बर और पाखंड बढ़ रहा है। यह एक नया भारत है, जो संविधान, राजनैतिक-सामाजिक आदशरे और परंपरा के सर्वश्रेष्ठ से मेल नहीं खाता। गौरी की हत्या इसीलिए हुई क्योंकि यह नया भारत उन्हें मंजूर नहीं था। यह भी स्पष्ट है कि यह अंतिम हत्या नहीं है। भारतीय समाज में जैसे-जैसे वैचारिक संघर्ष तेज होगा; और अधिक लोगों को बलिदान देना होगा। सभ्यता के दुश्मन तर्क-वितर्क की भाषा नहीं समझते। लेकिन अराजकता और विभेदन की यह व्यवस्था बहुत दिनों तक नहीं चल सकती। इसलिए कि इसमें आधुनिक भारत की किसी भी समस्या का समाधान निहित नहीं है। सिवाय यथास्थितिवादियों के किसी को नहीं लग रहा है कि भारत का भविष्य उज्ज्वल है, बल्कि उद्योग, उत्पादन, कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य सभी क्षेत्रों में गिरावट नजर आ रही है। अत: देश को जल्द ही नई दिशा में टर्न लेना होगा। यह वही दिशा नहीं हो सकती, जो पहले थी। उस पर गंभीर पुनर्विचार करना होगा। उसका बेहतर संस्करण विकसित करना होगा।सवाल है कि यह टर्न कब आएगा? जाहिर है कि खुद से तो नहीं ही आएगा। दस-बीस लेखकों, पत्रकारों, कार्यकर्ताओं के प्रयास से भी नहीं आएगा। यह जगन्नाथ का रथ है, जो हजारों हाथों से खींचा जाता है। इसलिए जो जहां है, उसे वहीं से लड़ना होगा। इस संघर्ष में मौन के लिए कोई जगह नहीं है। सुबह कब होती है, यह इस पर निर्भर है कि कितने लोग अपना डर, अनिर्णय और संकोच का त्याग कर इस वैचारिक संघर्ष में शामिल होने का साहस दिखाते हैं।